डारविन से क्या फर्क पड़ा?

केरन हैडॉक

12 फरवरी का विशेष महत्व है। इस दिन आज से 200 वर्ष पहले, 1809 में, चार्ल्स डारविन का जन्म हुआ था। तो क्या? डारविन का कार्य विज्ञान के विकास में एक लंबी छलांग की तरह है। खास तौर से उनकी पुस्तक *ऑन दी ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़* के प्रकाशन के बाद पिछले डेढ़ सौ साल ज़बर्दस्त प्रगति के साक्षी रहे हैं।

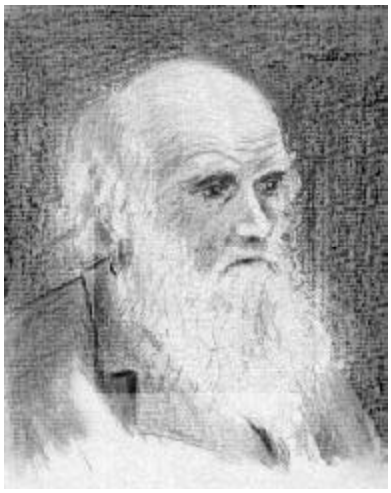

चार्ल्स डारविन ने कुछ बुनियादी सवालों - जैसे हम कौन हैं, हम कहां से आए हैं, और हमारा अस्तित्व क्यों है - को लेकर हमारी समझ में आमूल बदलाव किया है। उनके शोध कार्य ने हमें यह समझने में मदद दी है कि रासायनिक अभिक्रियाओं और भौतिक प्रक्रियाओं के ज़रिए निर्जीव पदार्थों से जीवन की उत्पत्ति और उसके बाद जीवन का विकास कैसे हुआ है। डारविन के बाद यह अधिकाधिक स्पष्ट होता गया है कि समूचा यथार्थ लगातार परिवर्तनशील है और इसे भौतिक प्रक्रियाओं के रूप में समझा जा सकता है।

डारविन के जन्म से बहुत पहले ही कई लोग यह समझ चुके थे कि पृथ्वी पर जीवन का विकास हुआ है और यह विकसित होता रहता है। प्राचीन भारत में भी कुछ लोग यह मानते थे कि ब्रह्मांड की रचना किसी बाह्य ईश्वर ने नहीं की है बल्कि यह आंतरिक विकास की प्रक्रिया से विकसित हुआ है। मगर काफी समय तक इस तरह की धारणाएं महज़ अनुमानों पर टिकी थीं और गड्ड-मड्ड थीं। ऐसे प्रमाण नहीं थे जो इनकी पुष्टि करें या इनके अर्थ की व्याख्या करें।

चार्ल्स डारविन ने स्थिति को बदल डाला। अपने जीवन भर के वैज्ञानिक अध्ययनों के आधार पर उन्होंने इस बात का विवरण तैयार किया कि जैव विकास कैसे होता है।1859 में उन्होंने लिखा था, "हर नई प्रजाति पूर्व में मौजूद प्रजातियों में परिवर्तनों के फलस्वरूप उभरती है।"

यदि आप अपने आसपास जीवन की विपुल विविधता को देखें, तो आप न सिर्फ इसके विविध रूपों से प्रभावित होंगे, बल्कि इस बात को देखे बिना भी नहीं रहेंगे कि जीवन के विभिन्न रूपों के बीच काफी समानताएं भी हैं। यह अवलोकन तब और भी असरदार हो जाता है जब हम, डारविन के समान, यह विचार करते हैं कि अतीत में ऐसे करोड़ों अन्य जीव धरती पर विद्यमान थे, जिन्हें हम मात्र उनके जीवाश्मों के माध्यम से ही जानते हैं।

जीवन का ताना-बाना

उदाहरण के लिए, सावधानी से किए गए अध्ययनों ने दर्शाया है कि पक्षी डायनासौर से सम्बंध रखते हैं। पक्षी और डायनासौर मगरमच्छों से सम्बंधित हैं, छिपकलियां सांपों की रिश्तेदार हैं, और सांप मगरमच्छों के निकट सम्बंधी हैं। और ये सब-के-सब कछुओं से सम्बंधित हैं, वगैरह।

ऐसे अध्ययनों से हमें सार्थक वर्गीकरण प्रणाली बनाने में मदद मिलती है और हम देख पाते हैं कि वास्तव में सारे जीव एक-दूसरे से जुड़े हैं। विभिन्न प्रजातियों के बीच अंर्तसम्बंध और परस्पर निर्भरता को समझने के प्रयास काफी प्राचीन समय से दुनिया भर की संस्कृतियों, सभ्यताओं में चलते रहे हैं। डारविन ने इन प्रयासों को आधार बनाया और इन्हें काफी विस्तार दिया।

आज हम जानते हैं कि पृथ्वी पर जीवन के समस्त रूप

एक-सी आणविक संरचनाओं व प्रक्रियाओं पर आधारित हैं। सभी जीवों में प्रोटीन निर्माण के लिए एक-से जिनेटिक सूत्र का सहारा लिया जाता है। यानी सबके जीन्स एक-सी रासायनिक संरचना - डी.एन.ए. - के बने हैं। और तो और, विभिन्न जीवों के डी.एन.ए. की बनावट और ृंखलाओं में भी काफी समानताएं पाई जाती हैं। उदाहरण के लिए, इंसानों और वनमानुषों की डी.एन.ए. ृंखला लगभग 90-95 फीसदी एक जैसी है। इसका कारण यह है कि इंसान और वनमानुष एक ही पूर्वज से विकसित हुए हैं। इसके बावजूद हमें यह मानने में हिचक होती है कि हम 'वहशी वनमानुषों' के बहुत निकट सम्बंधी हैं (हालांकि हमारा व्यवहार यदा-कदा वहशी ज़रूर हो जाता है)।

अलबत्ता, समानताओं के बावजूद, विभिन्न प्रजातियों के बीच, एक ही प्रजाति के अंदर, और यहां तक कि किसी प्रजाति की एक ही आबादी के अंदर आश्चर्यजनक विविधताएं भी हैं। इसमें से कुछ विविधताएं वंशानुगत होती हैं - ये एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित हो सकती हैं। यह वह महत्वपूर्ण बात थी, जिसने डारविन का ध्यान खींचा था और उन्हें जैव विकास की क्रियाविधि यानी प्राकृतिक चयन की खोज करने का मार्ग दिखाया था।

ये अटकलें तो इतिहास में कई बार लगाई गई थीं कि कोई प्रजाति किसी नई प्रजाति को जन्म दे सकती है। डारविन की उपलब्धि सिर्फ यह पहचानने में नहीं थी कि विकास हुआ है बल्कि यह खोज करने में थी कि यह विकास प्राकृतिक चयन के माध्यम से हुआ है। डारविन ने किसी समय लिखा था कि शायद उन्होंने गलत शब्द का चयन किया है - बेहतर होता यदि वे इसे प्राकृतिक संरक्षण कहते। 'चयन' शब्द के साथ दिक्कत यह है कि इससे ऐसा आभास होता है कि जैव विकास किसी उद्देश्यपूर्ण ढंग से चुने गए रास्ते पर चलता है, या यह सोची समझी क्रियाओं का परिणाम है। ऐसा नहीं है।

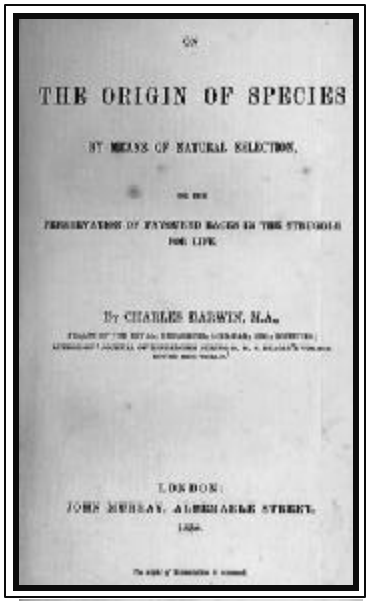
ON
THE ORIGIN OF SPECIES
BY MEANS OF NATURAL SELECTION,
OR THE
PRESERVATION OF FAVOURED RACES IN THE STRUGGLE
FOR LIFE.
By CHARLES DARWIN, M.A.,
LONDON:
JOHN MURRAY, ALBEMARLE STREET.
1859.

प्राकृतिक चयन और कृत्रिम चयन के बीच समानताओं ने भी इस गलतफहमी को बढ़ावा दिया है। खेती की शुरुआत से ही लोग खास उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए वनस्पति की किस्में और पशुओं की नस्लें तैयार करने का काम करते आए हैं। मसलन यही देखें कि आज हम जो पत्ता गोभी, फूल गोभी, सरसों के दाने, सरसों की साग, मूली, मोगरे की फली और शलगम खाते हैं, इन सभी को किसानों द्वारा जंगली सरसों के पौधे से विकसित किया गया है। (वैसे इसी से विकसित ब्रोकोली, ब्रसेल्स स्प्राउट्स, लाल गाजर वगैरह भारत में उतने लोकप्रिय नहीं हैं।) किसी भी जंगली पौधे में थोड़ी-बहुत विविधता होती है। किसानों ने अलग-अलग गुणों वाले सरसों के बीज अलग-अलग किए - किसी में पत्तियां बड़ी-बड़ी थीं और एकदम पास-पास लगती थीं, किसी में मोटी जड़ें थीं, किसी में मोटा तना था, या एकदम सटी हुई फूल की कलियां थीं। हज़ारों पीढ़ियों तक इस तरह किसी एक गुण के लिए चयन किए जाने का परिणाम हुआ कि एकदम अलग-अलग दिखने वाले पौधे तैयार हो गए।

जैसा कि चार्ल्स डारविन ने स्पष्ट किया था, यही प्रक्रिया प्रकृति में भी चलती है मगर बगैर किसी उद्देश्य के।

पिछले 200 वर्षों में प्राकृतिक चयन को प्रत्यक्ष देखा गया है। उदाहरण के लिए ब्रिटेन में छींटदार पतंगों की ऐसी आबादियां थीं जिनमें लगभग सारे पतंगे सफेद रंग के थे, और उन पर काले छींटे होते थे। मगर संयोगवश हुए एक जीन उत्परिवर्तन (म्यूटेशन) के परिणामस्वरूप इसी प्रजाति के कुछ पतंगे गहरे भूरे रंग के होते थे। ये पतंगे दिन में ऐसे पेड़ों पर आराम करते थे जिन पर हल्के रंग की लाइकेन का आवरण था। इस हल्के रंग की पृष्ठभूमि में सफेद रंग के पतंगे तो घुल-मिल जाते थे जबकि गहरे रंग के पतंगे

आसानी से नज़र आते थे और पक्षियों द्वारा खा लिए जाते थे। कालांतर में इस इलाके में उद्योगों का खूब विकास हुआ और प्रदूषण बहुत बढ़ गया। सारे पेड़ हल्के रंग के लाइकेन की बजाय धुएं के काले कणों से ढंक गए। अब गहरे रंग के पतंगे पृष्ठभूमि में घुल-मिल जाते थे जबकि हल्के रंग के पतंगे आसानी से नज़र आते थे और पक्षियों के शिकार बन जाते थे। चूंकि गहरे रंग के पतंगे ज़्यादा जीते थे और ज़्यादा संतानें पैदा करते थे, इसलिए धीरे-धीरे आबादी में अधिकांश पतंगे गहरे रंग के हो गए और हल्के रंग वाले इक्का-दुक्का ही बचे।

इस उदाहरण में प्राकृतिक चयन की प्रक्रिया ने नई प्रजाति को तो जन्म नहीं दिया क्योंकि पतंगों की ये दोनों किस्में परस्पर प्रजनन कर सकती हैं मगर प्राकृतिक चयन ने आबादी की बनावट को ज़रूर बदल दिया।

यह परिवर्तन किसी सोची-समझी डिज़ाइन के तहत नहीं हुआ था। मूल आबादी में ही कुछ पतंगों में संयोगवश ऐसा उत्परिवर्तन मौजूद था जिसके कारण उनका रंग थोड़ा अलग था। यह उत्परिवर्तन परिवेश में परिवर्तन के कारण नहीं हुआ था, यह तो पहले से मौजूद था। परिवेश में परिवर्तन से पूरी आबादी के रंग में परिवर्तन हुआ था। गौरतलब बात यह है कि पतंगों ने अपने रंग में परिवर्तन परिवेश से अनुकूलन के लिए नहीं किया था।

लिहाज़ा स्पष्ट है कि प्राकृतिक चयन एक उद्देश्यपूर्ण रचनात्मक कार्य नहीं है। यह तो एक बगैर सोची-समझी संपादन की प्रक्रिया है। जैव विकास का कोई लक्ष्य नहीं है। और जीवन का कोई भी रूप किसी भी अन्य रूप से श्रेष्ठ नहीं है।

जैव विकास में संयोग की भूमिका ही इसे अद्‌भुत बनाती है। जब हम कहते हैं कि जैव विकास संयोगवश हुआ है, तो कहने का मतलब यह नहीं है कि यह अकारण हुआ है। कहने का मतलब है कि इसका जो भी कारण हो, वह किसी तयशुदा लक्ष्य की प्राप्ति के लिए कार्य नहीं करता।

संयोग और अनिवार्यता

डारविन का शोध डेमोक्रिटस (लगभग 350 ईसा पूर्व) की इस सूझबूझ को नया अर्थ देता है: "ब्रह्मांड में हर चीज़ का अस्तित्व संयोग और अनिवार्यता का परिणाम है।"

डारविन को जैव विकास और प्राकृतिक चयन के प्रमाण नाना प्रकार के जंतुओं और पेड़-पौधों के अध्ययन से प्राप्त हुए थे। ये अध्ययन उन्होंने अपने साथियों के साथ दक्षिण अमरीका के गैलापैगोस द्वीपों पर तथा अन्यत्र किए थे। उन्होंने देखा कि कैसे जीवों की आबादियां जब किसी नए परिवेश में पहुंचती हैं और उनका पर्यावरण बदलता है, तो वे नए-नए रूप अख्तियार कर लेती हैं। दशकों के अध्ययन के बाद, *ऑन दी ओरिजिन ऑफ स्पीशीज़* (प्रजातियों की

पर्यावरण का दबाव और संयोग

पहले

ज़्यादातर पतंगे सफेद थे क्योंकि वे नज़र नहीं आते थे, मगर कुछ काले भी थे; परिवेश सफेद के अनुकूल था।

बाद में

उद्योगों ने परिवेश को बदल दिया, अब सफेद वाले नज़र आते हैं, काले छिप जाते हैं; कालों की संख्या बढ़ गई है।

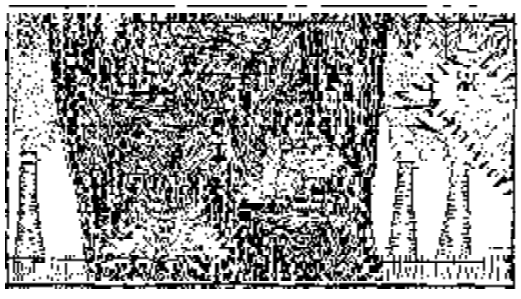

उत्पत्ति) के अलावा सैकड़ों अन्य प्रकाशनों और दुनिया भर के वैज्ञानिकों व बुद्धिजीवियों के साथ पत्राचार के बाद उन्हें यह स्पष्ट था कि कोई भी चीज़ अचर, अपरिवर्तनशील नहीं है - सारा जीवन निरंतर बदलता रहता है।

यह बात धर्म शास्त्र के लिए एक चुनौती थी। विज्ञान के प्रमाणों ने कुछ धार्मिक विश्वासों का विरोध किया। आज हम जानते हैं कि स्वयं जीवन भी कुछ ऐसे सरल रसायनों से विकसित हुआ है, जो स्वयं की प्रतिलिपियां बनाने में सक्षम थे। जीवन के विकास के साथ चेतना अस्तित्व में आई। खोजबीन के साथ यह समझ में आता जा रहा है कि सरल जीव-जंतुओं में तंत्रिका तंत्र कैसे काम करता है, और कैसे मानव चेतना को चंद बुनियादी प्रक्रियाओं के आधार पर समझा जा सकता है जो अत्यंत जटिल ढंग से व्यवस्थित हुई हैं।

जैव विकास की क्रियाविधि का प्रतिपादन होने के बाद हम यह देख पाते हैं कि जीवन हमारी कल्पना से कहीं ज़्यादा हैरतअंगेज़ है। जैसा कि डारविन ने कहा था, "इतनी सरल शुरुआत से शुरू करके इतने सुंदर और इतने आश्चर्यजनक व असीम रूप विकसित हुए हैं, हो रहे हैं।" ***(स्रोत फीचर्स)***